इकाई 30 राज्य और धर्म

इकाई की रूपरेखा

30.0 उद्देश्य

इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- तत्कालीन लेखकों के धर्म संबंधी लेखनों के स्वरूप के बारे में जान सकेंगे,
- मुगल शासकों की धार्मिक नीतियों के बारे में कुछ इतिहासकों के विचारों कें बारे में जान सकेंगे तथा
- मुगल शासकों की नीतियां कहां तक उनके व्यक्तिगत धर्म से प्रभान्वित हुई।

30.1 प्रस्तावना

उत्तर भारत में मुगलों की विजय के बाद उच्च शासकीय वर्ग के संघटन में एक आमूलकारी परिवर्तन हुआ। यह भारतीय इतिहास की एक मंहत्वपूर्ण घटना थी। इस समय से एक नये युग की शुरूआत मानी जा सकती है। इस नए युग के सूत्रपात का एक महत्वपूर्ण राजनैतिक कारण यह था कि इसके बाद से भारतीय राजनैतिक व्यवस्था में मुसलमानों का उदय एक प्रभावकारी तत्व के रूप में हुआ। यह प्रक्रिया कई वर्षो तक जारी रही और मुगल शासन काल तक कायम रही। इसका भारतीय इतिहास के काल विभाजन पर भी प्रभाव पड़ा। कुछ आधुनिक इतिहासकार मध्ययुग को "मुस्लिम काल" की संज्ञा देने लगे। उनका यह सोचना है कि इस काल में मुसलमान शासक वर्ग के रूप में मौजूद थे अत: इस्लाम का राज्य धर्म के रूप में मान्य होना अनिवार्य था। पर यह दृष्टिकोण भ्रांतिपूर्ण है क्योंकि यह उच्च वर्ग के धर्म पर जरूपत से ज्यादा बल देता है और मध्यकालीन समाज के आर्थिक, राजनैतिक और सामातिक हितों को नजरअंदाज कर देता है। दूसरी बात यह है कि शासक के धर्म को राज्य का धर्म मान लेना तर्कसंगत नहीं है। इस प्रकार सोचने से राज्य और धर्म का मुद्दा उलझ जाता है।

इस इकाई में सबसे पहले हम उस पृष्ठभूमि का उललेख करेंगे जिसमें मुगल राज्य तंत्र सकिय था। हम समकालीन लेखकों की टिप्पणियों का भी उल्लेख करेंगे। धर्म के प्रति मुगल सम्राटों के दृष्टिकोण का भी

परीक्षण किया जाएगा। इस इकाई में शासक की व्यक्तिगत आस्था, राज्य की नीतियों और गैर-मुसलमानों के साथ संबंधों को चर्चा की जाएगी। हमने यहां जानबुझकर मुगल-रापूत संबंधों की चर्चा नहीं की है क्योंकि इस पर इकाई 11 में विस्तार से बातचीत की जा चुकी है।

हम यहां एक बात जोर देकर कहना चाहते हैं कि मध्यकालीन इतिहास, खासकर इस काल के धर्म, का मुल्यांकन करते समय आधुनिक शब्दावलियों का खूव सावधानी के साथ उपयोग किया जाना चाहिए। "सम्प्रदायवाद" "धर्माधता", "धार्मिक कट्टरता" जैसी शब्दावलियों का आज खुलकर उपयोग हो रहा है। कई बार इसके माध्यम से तथ्यों को तोड़-मरोड़ दिया जाता है। अत: इन मुद्दों को सही परिप्रेक्ष्य में समझने के लिए हमें एक अनुशासित ऐतिहासिक दृष्टिकोण का मार्ग अपनाना होगा और मध्ययुग की कुछ महत्वपूर्ण विशेष्ताओं को सावधानी से परखना होगा।

30.2 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

इस भाग में हम धर्म के प्रति राज्य और जनता के दृष्टिकोण पर विचार करेंगे। इसके साथ-साथ राज्य और धर्म के संबंध के नाजुक मुद्दे पर समकालीन और आधुनिक इतिहासवेत्ताओं का दृष्टिकोण जानने में भी मदद मिलेगी।

30.2.1 तत्कालीन परिदृश्य

इस काल में अधिकांश लोग धर्म के प्रति आस्थावान थे। प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति से धार्मिक विषय का ज्ञाता होने की अपेक्षा की जाती थी। इसके परिणामस्वरूप इस काल में हिंदुओं या मुसलमानों द्वारा लिखे गए ऐतिहासिक लेखों, आदि पर धार्मिक विचारों की गहरी छापा है।
इन पर अगर जरा विवेकहीन तरीके से विचार किया गया तो गलम निर्णय और भ्रामक निष्कर्ष सामने आएंगे।

दूसरे, जनजीवन में धर्म के महत्व को देखते हुए शासक अपने व्यक्तिगत और रातनैतिक हितों के लिए इसका खुलकर उपयोग करते थे। महमूद गजनी जैसे शासक अपने दुश्मनों के खिलाफ अक्सर **जेहाद** (धार्मिक युद्ध) का नारा दे दिया करते थे जबकि वस्तुत: इनमें से किसी ने धर्म के लिए लड़ाई नहीं की। पी. सरन के अनुसार "हमें उेसा कोई भी उदाहरण नहीं मिलता है जिसमें मुसलमान शासक ने शुद्ध रूप से धार्मिक आधार पर और धार्मिक उद्देश्य के लिए युद्ध किया हो"।

तीसरे, **उलेमा** (मुस्लिम धर्मशास्त्री) का मनोबल काफी ऊँचा था। वे चाहते थे। कि शासक अपने प्रशासन में इस्लामी संहिता का पालन करें और इसी के तहत गैर-मुसलमानों क़े साथ व्यवहार करें पर पी. सरन लिखते हैं, "मुसलमान धर्मशास्त्रियों ने मुसलमानों को गैर-मुसलमानों, खासकर मूतिपुजकों के प्रति एक खास तरह का व्यवहार करने का निर्देश दिया था। यह ब्राह्मण धर्मशास्त्रियों के उस दर्शन से भिन्न नहीं था जिसमें धर्म की पवित्रता के नाम पर अपने देश के एक बड़े हिस्से को त्याज्य, और अदुत समझा गया था और उन पर कई तरह के जुल्म ढाए जाते थे।"

दूसरी तरफ प्रशासनिक मामलों में अक्सार भारत के मुसलमान शासक कट्टरनंथी **उलेमा** के विचार से सहमत नहीं होते थे। अधिकांश मामलों में वे अपनी नीतियों के अनुकुल न पड़ने वाले धार्मिक समुदायों के आदेशों को स्वीकार नहीं करते थे। उदाहरण के लिए, 14 वीं शताब्दी का इतिहासकार जिआउद्दीन बर्नी विस्तार के साथ अलाउद्दीन खलजी के दृष्टिकोण का इसप्रकार उललेख करता है : "वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि राजनैतिक व्यवस्था और सरकार अलग चीज है और धार्मिक कानून (**शरीयत**) अलग चीज है। शासकीय आदेश राजा के अधिकार क्षेत्र में आते हैं और न्याय निर्दिष्ट करने वाले आदेशों पर **काजियों** और **मुफ्तियों** का अधिकार होता है। उसके मतानुसार राज्य के मामलों में वह जनता के हित का ख्याल रखता है और अपने किसी कार्य को कानूनी और गैर-कानूनी तराज पर नहीं तोलता है।" सुल्तान के काजी बयाना के मुगीसुद्दीन ने गैर-मुसलमान जनता के प्रति कठारे और अपमानजनक

दृष्टिकोण अपनाने की सलाह दी थी, पर अलाउद्दीन ने उसकी सलाह अस्वीकृत कर दी और **काजी** को कहा कि उसके लिए सरकार और उसकी जनता का हित सर्वोपरि है। अत: उसने कट्टरपंथी विचारों को नजरअंदाज करते हुए आदेश जारी किए और नीतियां निर्धारित कीं। वस्तुत: धार्मिक कट्टरता और राजनैतिक मामलों के प्रति अलाउद्दीन के दृष्टिकोण ने नया मार्ग प्रशस्त किया : मध्यकालीन शासकों ने धार्मिक कानूनों की अपेक्षा प्रशसनिक जरूरतों और राजनैतिक आवश्यकताओं को अधिक महत्व दिया। परंतु इसके साथ-साथ **उलेमा** को खुश रखने की नीति भी अपनाई जाती रही। ये शासक इस समुदाय को संतुष्ट करने और राजनैतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्राय: **उलेमा** को वित्तीय और अन्य प्रकार की सहायता प्रदान किया करते थे।

एक बात यहां स्परूट कर देना आवश्यक है कि मध्य युग में धर्म जीवन का अह्म हिस्सा था अत: आम तौर पर शासकों ने अपनी नीतियों और कार्यो को धार्मिक शब्दावली में व्यक्त किया।

30.2.2 समकालीन इतिहास लेखन

मध्यकाल में शिक्षा की व्यवस्था के अनुरूप एक इतिहासकार **मदरसों** (मध्यकालीन शिक्षा केंद्र) में, धार्मिक माहौल में, प्रशिक्षण प्राप्त किया करता था। इसका उसके लेखन पर गहरा असर पड़ा। अपने संरक्षक की सेना के लिए वह **लश्कर-ए इस्लाम** (इस्लाम की सेना) और उसके दुश्मन की सेना के लिए **लश्कर-ए कुफ्र (काफिरों** की सेना) शब्दावली का इस्तेमाल किया करते थे। इसी प्रकार अपने स्वामी के सैनिकों की मौत को वह **शहादत** (शहीद) की संज्ञा देता था जबकि दूसरे पक्ष के सैनिकों को वह नर्क भेजने में जरा भी देर नहीं करता था। भारत में शासक के धर्म की अपेक्षा शासितों के धर्मानुयायियों की संख्या ज्यादा थी और इस स्थिति में ऐसी शब्दावली का उपयोग उलझन ही पैदा करता है। इन अभिव्यक्तियों को देखकर कोई भी असावधान व्याख्याता मध्यकालीन भारत के संघर्ष को मूलत: धार्मिक मान सकता है और वह यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि यह संघर्ष मूलत: इस्लाम और **कुफ्र** के बीच का संघर्ष था। लेकिन यह तथ्यों को विश्लेषित करने का सही ढंग नहीं होगा क्योंकि इन्हें किसी भी स्थिति में समकालीन राज्य की नीतियों के साथ उलझाना उचित नहीं है। वस्तुत: मूलत: यह एक प्रकार की शैली थी, लिखने का ढंग था, इस संबंध में कई प्रमाण भी उपलब्ध हैं। शाहजहां के शासनकाल के एक इतिहासकार मोहम्मद सालिह (**अमल-ए सालिह** के लेखक) ने कमालुद्दीन रोहिला के नुतृत्व में हुए अफगान विद्रोह को **दुश्मन -ए दीन** (धर्म का दुश्मन) की संज्ञा दी है। 1630 ई. में जब ख्वाजा अबुल हसन (शाहजहां का एक कुलीन) ने नासिक अभियान की शुरूआत की तो अब्दुल हमीम लौहौरी (शाहजहां का दरबारी इतिहासकार) ने मुगल सेना के लिए **मुजाहिदान-ए दीन** (धर्म की रक्षा के सैनिक) शब्दावली का प्रयोग किया जबकि वास्तविक स्थिति यह थी कि विपक्षी सेना में गैर-मुसलमानों की अपेक्षा मुसलमानों की संख्या अधिक थी और मुगल सेना में भी गैर-मुसलमान सैनिक पर्याप्त मात्रा में शामिल थे।। यह भी रोचक तथ्य है कि इन्ही इतिहासकारों ने निजामशाही सेना के खिलाफ लड़ रहे मुगल सैनिकों को **मुजाहिदान -ए इस्लाम** (इस्लाम की रक्षा में लड़ रहे सैनिक) कहा जबकि निजामशाही सेना में अधिकांश सैनिक मुसलमान थे। गैर-मुसलमान सरदारों और कुलीनों के खिलाफ भी जब मुगल सेना भेजी जाती थी तो उनके लिए भी उसी शब्दावली का इस्तेमाल किया जाता था। जुझार सिंह बुंदेला के विद्रोह को कुचलने के लिए गई सेना को **लश्कर-ए इस्लाम** कहा गया जबकि मुगल सेना में बड़ी संख्या में गैर-मुसलमान सैनिक मौजूद थे। शाहजहां के अधीन बल्ख और बदख्शां के खिलाफ भेजे गए अभियान में भी **मुजाहिद**, शहादत, आदि शब्दों का इस्तेमाल किया गया। ध्यान रहे इस बार मुगल शुद्ध रूप से अपने सहधर्मियों के साथ लड़ रहे थे। इससे पता चलता है कि इन शब्दों का धार्मिक महत्व कम और शैलीगंत महत्व ज्यादा था। यह अभिव्यक्ति का एक ढंग था, एक शैली थी। अत: इस प्रकार के लेखन को पढ़ते समय कुलीन सावधानी बरतनी चाहिए।

30.2.3 आधुनिक इतिहास लेखन

"धर्म और राज्य" विषय पर शोध का प्रारंभ एलियट और डाफवसन ने काफी पहले किया था। उन्होंने मध्यकालीन फारसी ग्रंथों के अग्रेजी में अनुवाद की एक बड़ी योजना प्रारंभ की थी। उन्होंने अक्सर ऐसे प्रसंग उड़ाए जिनका संबंध या तो शासक की (मूलम: मुसलमान) की "धार्मिक कट्टरता" से था। अथवा उन्होंने उन उद्धरणों को लिया जिसमें मुठ्ठी भर मुसलमान शासकों द्वारा स्थानीय भारतीय जनता (जो ज्यादातर हिंद को दबाए जाने का उल्लेख किया था।)

वस्तुत: अंग्रेजी ने ऐसा एक सोची-समझी राजनैतिक नीति के तहत किया था। परंतु जदुनाथ सरकार, ए. एल. श्रीवास्तव, श्रीराम शर्मा, आदि भारतीय इतिहासकारों ने भी उनके ही दृष्टिकोण को अपना लिया।

एक बात गौर करने की है कि जब शासक और शासित अलग-अलग धर्म के होते थे तभी "धार्मिक नीति" के तहत उनकी क्रिया-प्रतिक्रियाओं की चर्चा की जाती थी। अगर अपने ही धर्मानुयायियों के प्रति शासक सही और गलत रुख अपनाता था तो उसे "धार्मिक नीति " का अंग नहीं माना जाता था। इसी कारण औरंगजेब के "हिंदू विरोधी" रवैये का तो खूब प्रचार किया गया पर उसने अपने ही धर्म के विद्वानों, दार्शनिकों और संतों पर जो जुल्म ढाए उसकी चर्चा कोई नहीं करता। याद रहे औरंगजेब के ही आदेश से सरमद, शाह मौहम्मद बदख्शी, मौहम्मद ताहिर और सैय्यद कुतबुद्दीन अहमदाबादी को फांसी की सजा दे दी गयी थी।

सीधे-सीधे शब्दों में कहा जाए तो धर्म शासक के हितों की पूर्ति का एक हथियार मात्र था। कभी शासक अपने स्थानीय सरदारों को धार्मिक रियायतें दिया करते थे तो कई बार शक्ति का उपयोग कर उन्हें कुचलते थे। उच्च और निम्न शासकीय समुदायों की क्रिया-प्रतिक्रिया को केवल धर्म के परिप्रेक्ष्य में देखना इतिहास के साथ अन्याय करना होगा। यह आर्थिक और राजनैतिक मुद्दों की भी अनदेखी होगी।

अंतत: इस विषय (राज्य और धर्म) के प्रति एक और दृष्टिकोण अपनाया जा सकता है जो महत्वपूर्ण होते हुए भी इतिहासकारों का ध्यान अपनी ओर कम ही आकर्षित कर सका है। शासक की व्यक्तिगत आस्था, विश्वास, अहं और अपने समय की समस्याओं के प्रति उसके स्वयं के दृष्टिकोण और उसके द्वारा उन समस्याओं को हल करने के तरीके का भी विशेष महत्व है। इस दृष्टिकोण के तहत शासकों और उच्च पदस्थ लोगों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषणात्मक परीक्षण किया जा सकता है। औरंगजेब के कार्यों और आदेशों का मूल्यांकन करते समय इस दृष्टिकोण से काफी मदद मिलेगी।

बोध प्रश्न 1

1) राज्य की नीतियों के साथ धर्म को उलझाने में समकालीन लेखन किस हद तक उत्तरदायी है ?

....

....

....

....

....

2) मुगल शासकों की "धार्मिक नीति" संबंधी इलियट और डॉवसन के दृष्टिकोण का आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिए।

....

....

....

....

....

30.3 धर्म के प्रति मुगल शासकों का दृष्टिकोण

इस भाग में हम धर्म और धार्मिक समुदायों के प्रति मुगल शासकों के दृष्टिकोण का परीक्षण करेंगे।

30.3.1 अकबर

1560-65 के बीच अकबर ने जो कदम उठाए और इससे साम्राज्य की गैर-मुस्लिम जनता पर जो प्रभाव पड़ा उसी के आधार पर आम तौर पर धर्म और धार्मिक समुदायों के प्रति अकबर के दृष्टिकोण का

मूल्यांकन किया जाता है। इस काल में सम्राट ने राजपूतों से वैवाहिक संबंध स्थापित किए, तीर्थ कर हटा दिया, युद्ध बंदियों के इस्लाम धर्म में परिवर्तन करने पर रोक लगा दी और **जजिया** कर समाप्त कर दिया। अकबर के इन सब कार्यों ने उसे एक "धर्मनिरपेक्ष" व्यक्तित्व प्रदान किया। पर अपने व्यक्तिगत जीवन में अकबर एक श्रद्धावान मुसलमान था। **"गुलजार-ए अकबर"** और **"नफाइस-उल मासिर"** जैसे ग्रंथों में इस बात का उल्लेख है कि अकबर के मन में **उलेमा** के प्रति गहरा सम्मान था और उसने इस समुदाय को कई प्रकार की रियायतें भी दी थीं। सम्राट की शह पाकर उनमें से कुछ ने यहां तक कि मुसलमानों के गैर-सुन्नी संप्रदायों को दंडित करना शुरू कर दिया। महादवियों और शियाओं पर ढाए गए जुल्मों को इस काल के ऐतिहासिक लेखों में लगभग नजरअंदाज कर दिया गया है।

अकबर के "उदारवाद" की व्याख्या कई रूपों में की जाती है। यह कहा जाता है कि उसके पालन-पोषण और विविध बौद्धिक प्रभावों ने उसके व्यक्तिगत विचारों को बदल दिया। दूसरी तरफ एक मत यह भी है कि अकबर ने इस्लाम छोड़ दिया था और उसका उदारवादी दृष्टिकोण आडंबरपूर्ण था। आज इस धारणा से लोग सहमत हैं कि अकबर के इन कार्यों के पीछे राजनैतिक उद्देश्य था। किसी विश्वसनीय मुस्लिम समर्थन के अभाव में अकबर के पास राजपूतों और भारतीय मुसलमानों के साथ संधि करने के अलावा और कोई चारा नहीं था। इन कार्यों के माध्यम से वस्तुत: गैर-मुसलमानों को कुछ रियायतें दी गईं और उनका सहयोग हासिल किया गया। हालांकि 1565 ई. के बाद उसके दृष्टिकोण में कुछ परिवर्तन हुआ। "धर्म के मामले में उसके दृष्टिकोण में महत्वपूर्ण बदलाव आया।" उसके वकील मुनीम खां ने एक दस्तावेज (अगस्त-सितंबर 1566) पर हस्ताक्षर किए जिसमें आगरा के आसपास के इलाके से **जजिया** कर वसूल करने का आदेश था। 1568 ई. में अकबर ने प्रसिद्ध चित्तौड़ में जारी किये गये **फतहनामा (मुन्शात्-ए नमकीन** में संग्रहीत) में धार्मिक शब्दावलियाँ और प्रतीकों का जमकर उपयोग किया गया है और उसकी तुलना किसी भी अन्य पूर्वाग्रहयुक्त और धार्मिक आदेश से की जा सकती है। उसने राजपूतों के खिलाफ लड़े गए युद्ध को **जेहाद** कहा, मंदिर तोड़कर और काफिलों को मारकर गर्वान्वित हुआ। **शरायफ-ए उस्मानी** के अनुसार सम्राट ने बिलग्राम के काजी अब्दुल समद को वहां हिंदुओं द्वारा की जाने वाली मूर्तिपूजा रोकने का आदेश दिया था। बदायूंनी के अनुसार और तो और 1595 ई. में अकबर ने पुन: **जजिया** कर लगा दिया पर यह कार्यान्वित न हो सका। इस काल का एक रोचक तथ्य यह है कि धार्मिक असहिष्णुता के इस वातावरण में भी 1566-79 के बीच राजपूत राजा उसकी सेवा में शामिल होते रहे (देखिए इकाई 11)।

अत: सम्राट के लिए धर्म प्रमुख मुद्दा नहीं था। अकबर का मुख्य उद्देश्य स्थानीय सरदारों को नियंत्रण में रखना था। राजनैतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए धर्म का औजार के रूप में प्रयोग किया गया। जब अकबर को इससे पूरा फायदा नहीं मिला तो उसने यह नीति स्थगित कर दी। अकबर ने 1575 ई. में **इबादत खाना** की स्थापना की। इस पक्ष पर चर्चा वांछनीय है। इस्लाम धर्म सिद्धांत के विभिन्न मुद्दों पर मुक्त बहस करने के लिए इसकी स्थापना की गई थी। परंतु इसमें मुस्लिम व्याख्याता आपस में लड़ते ही रहते थे अत: अकबर जल्द ही इनसे ऊब गया। आरंभ में केवल सुन्नियों को ही इस बहस में हिस्सा लेने का मौका मिला। परंतु सितंबर 1578 ई. से सम्राट ने सूफियों, शियाओं, ब्राह्मणों, जैनों, ईसाइयों, यहूदियों, पारसियों, आदि सभी धर्म के व्यक्तियों के लिए भी **इबादत खाना** के द्वार खोल दिए। **इबादत खाना** में हुए विवाद से अकबर को नई दिशा मिली और वह यह जान सका कि सभी धर्मों का मूलतत्व एक है। अपने को **मुजतहिद** और **इमाम-आदिल** घोषित कर अकबर ने सभी धार्मिक मसलों पर **उलेमा** के बीच के मतभेदों को निपटाने और मत व्यक्त करने का अधिकार प्राप्त करने का दावा किया। मुगल समाज के एक समुदाय ने इसका जमकर विरोध किया परंतु अकबर अंतत: कट्टरपंथियों को दबाने में सफल रहा।

अकबर का **तौहीद-ए इलाही** (इसे प्राय: **दीन-ए इलाही** कहा जाता है जो गलत है) इस शासन काल की एक महत्वपूर्ण घटना थी। आर. पी. त्रिपाठी (**राइज ऐंड फॉल ऑफ द मुगल एम्पायर,** इलाहाबाद, 1956, पृ. 285-89) ने इस विषय का विस्तार से परीक्षण किया है। उनके कथन को यहां विस्तार से रखना प्रासंगिक होगा : "अकबर जैसे चालाक शासक ने यह भली-भांति समझ लिया होगा कि न तो सभी धर्मों को एक में मिलाना संभव था और न ही मौजूद धर्मों से अलग एक और नया धर्म स्थापित करना संभव था। परंतु उसने उसे सुनने वालों तक अपनी बात पहुंचाने की आवश्यकता महसूस की। इस पंथ का कोई धार्मिक ग्रंथ नहीं था, किसी पुजारी की व्यवस्था नहीं थी, उपासना का कोई पवित्र

स्थल नहीं था, दीक्षा के अलावा कोई अनुष्ठान या समारोह नहीं था ···· प्रत्येक सदस्य को वचन पत्र लिखना होता था, जैसे सम्पत्ति, जीवन, सम्मान और धर्म का त्याग ···· (यह) एक धर्म नहीं था और अकबर ने कोई "चर्च" स्थापित करने की कोशिश नहीं की ········ अनुयायियों को शामिल करने के लिए शक्ति और धन का सहारा नहीं लिया गया ···· यह पूर्णत: एक व्यक्तिगत मुद्दा था, यह सम्राट और उसकी जनता के बीच का मामला नहीं था बल्कि अकबर और उसे पीर या गुरू मानने वालों के बीच का मामला था।"

ऐसा लगता है कि अकबर अपने चारों ओर एक निष्ठावान वर्ग खड़ा करना चाहता था जिन्हें वह आध्यात्मिक दिशा प्रदान कर सके। अत: **तौहीद-ए इलाही** का अकबर की धार्मिक या राजनैतिक नीति से कुछ भी लेना-देना नहीं था।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि राजनैतिक स्थिति सुदृढ़ बनाने के लिए आम तौर पर अकबर ने धार्मिक भेदभाव की नीति नहीं अपनाई। परंतु अकबर ने धर्म और जाति को भूलकर उन सबके खिलाफ कड़े कदम उठाए जिन्होंने उसे चुनौती देने की कोशिश की या अपनी सामाजिक या वैचारिक मूल्यों की सीमा का अतिक्रमण किया। यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि किसी भी धार्मिक समुदाय के खिलाफ कड़ा रुख नहीं अपनाया गया बल्कि व्यक्तियों को दंड दिया गया।

बोध प्रश्न 2

1) 1565 ई. तक धर्म और धार्मिक समुदायों के प्रति अकबर के दृष्टिकोण का विश्लेषण कीजिए।

....

....

....

....

....

2) **इबादत खाना** के बारे में 50 शब्द लिखिए।

....

....

....

....

....

30.3.2 जहांगीर

समग्र रूप से जहांगीर ने अपने पिता के उदारवादी दृष्टिकोण का पालन किया। आर. पी. त्रिपाठी के अनुसार जहांगीर " अपने पिता से ज्यादा और पुत्र खुर्रम से कम कट्टर था।" उस पर आरोप लगाया जाता है कि उसने सिक्खों, जैनियों और सुन्नियों के खिलाफ कठोर कदम उठाए। यहां यह ध्यान रखना चाहिए कि गुरू अर्जुन सिंह, मानसिंह सूरी और शेख अहमद सरहिंदी जैसे लोग व्यक्तिगत रूप से उसके कोपभाजन बने, पूरे धार्मिक समुदाय को इसका दंड नहीं भोगना पड़ा। दूसरी तरफ जहांगीर तीन बार जदरूप गोसाई के पास गया था और उसके साथ हिंदू दर्शन पर विचार-विमर्श किया था।

जहांगीर कभी-कभी दूसरे व्यक्तियों के धार्मिक विचारों से उत्तेजित हो जाया करता था। अपनी इसी कमी के कारण उसने सुन्नी धार्मिक नेता शेख अहमद सरहिंदी, मुजद्दिद अलिफ सानी को तीन साल तक ग्वालियर के किले में बंद रखा। शेख ने दावा किया था कि अपने "सपने" में वह पहले के **खलीफाओं** की अपेक्षा ईश्वर के अधिक समीप आ गया था। जहांगीर को यह वक्तव्य निंदनीय लगा था। कौकब,

अब्दुल लतीफ और शरीफ जैसे कई मुसलमानों को केवल इसीलिए कैदखाने में डाल दिया गया क्योंकि उनके विचार सम्राट को पसंद नहीं थे।

यह भी ध्यान देने की बात है कि जहांगीर के शासनकाल में हिंदू **मनसबदारों** का प्रतिशत कम नहीं हुआ। उसने कभी भी हिंदू मंदिरों को तोड़ने की नीति नहीं अपनाई उसने **जजिया** भी लागू नहीं किया और वह जोर-जबरदस्ती से इस्लाम कबूल कराने के पक्ष में भी नहीं था।

30.3.3 शाहजहां

शाहजहां जब 1627 ई. में गद्दी पर बैठा उस समय तक सहिष्णुता और उदारवाद की नीति में परिवर्तन का सिलसिला शुरू हो गया था। इस्लाम की विचारधारा का राज्य के मामले में हस्तक्षेप होने लगा, सम्राट को सलाम करने की प्रथा में बदलाव से तथ्य स्पष्ट होता है। अकबर ने अपने दरबार में **सिजदा या** झुक कर सलाम करने की प्रथा चलाई थी परंतु शाहजहां ने प्रथा को समाप्त कर दिया क्योंकि **सिजदा** खुदा के सामने ही किया जा सकता था। शाहजहां ने **सिजदा** के स्थान पर **चहार तस्लीम** की प्रथा शुरू की। इसके अतिरिक्त **अमल-ए सालिह** के लेखक ने बताया है कि सम्राट के आदेश से बनारस के आसपास के 76 मंदिर तोड़े गए थे। उनका तर्क था कि कोई भी नया मंदिर (**ताजा सनमखाना**) नहीं बनवाया जा सकता था। हां, शाहजहां के शासनकाल से पहले बने मंदिरों को नहीं तोड़ा गया। एक महत्वपूर्ण बात यह है कि इस्लामी कानून के खिलाफ सम्राट संगीत और चित्रकला को सरंक्षण दिया करता था और इस मामले में उस पर मुसलमान कट्टरपंथियों का जोर नहीं चलता था। ध्रुपद सम्राट का प्रिय राग था। सम्राट ने प्रसिद्ध हिंदू संगीतकार जगन्नाथ को प्रोत्साहन दिया और बाद में उसे **महा कवि राय** की उपाधि से सम्मानित किया। शाहजहां के शासन काल में चित्रकला का भी विकास हुआ। संगीत और चित्रकला को संरक्षण देना अकबर के जमाने से ही राज्य नीति का हिस्सा था। उसके पोते ने भी इस परंपरा का पालन किया।

शाहजहां अकबर के रास्ते से थोड़ा हट गया था। जहांगीर ने कामोबेश अकबर के पथ का ही अनुगमन किया था। परंतु शाहजहां ने कभी भी गैर-मुसलमानों पर **जजिया** कर नहीं लगाया था। इसके अलावा पहले की अपेक्षा उसके हिंदू **मनसबदारों** की संख्या में भी कमी नहीं आई थी।

30.3.4 औरंगजेब

औरंगजेब का शासनकाल विवादों से घिरा हुआ है। विद्वानों के विचारों में खासकर धर्म के मामले में काफी मतभेद है। इस दृष्टि से हम विद्वानों को तीन कोटियों में विभक्त कर सकते हैं :

क) जदुनाथ सरकार, एस. आर. शर्मा और ए. एल. श्रीवास्तव औरंगजेब को धार्मिक कट्टरवाद और पक्षपात के लिए दोषी ठहराते हैं।

ख) शिबली नोमानी, जहीरूद्दीन फारूकी और इश्तियाक हुसैन कुरैशी औरंगजेब के सभी कार्यों को राजनैतिक प्रकृति का मानकर न्यायोचित ठहराते हैं।

ग) सतीश चन्द्र और अतहर अली एक "निष्पक्ष" रुख अपनाते हुए औरंगजेब के कार्यों का विश्लेषण करते हैं और पक्ष-विपक्ष के तर्क जाल में नहीं उलझते हैं।

औरंगजेब पर विचार करने में यह सुविधा है कि उस पर विद्वानों ने खूब लिखा है और उस पर तत्कालीन दस्तावेज पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं। हम औरंगजेब के कार्यकलापों को दो भागों में विभक्त कर सकते हैं : (क) गौण असंगत अध्यादेश, और (ख) प्रधान आदेश जिन्हें 'राज्य' नीति का हिस्सा समझा जा सकता है। हम इन आदेशों और कार्यों पर क्रम से विचार करेंगे और उनके आधार पर औरंगजेब की धार्मिक नीति का मूल्यांकन करेंगे। सबसे पहले निम्नलिखित मुद्दों पर विचार किया जाएगा :

i) औरंगजेब ने सिक्कों पर **कलमा** (इस्लाम धर्म के प्रति आस्था) खुदवाने की प्रथा बंद कर दी। सिक्कों के पैर के नीचे पड़ने से अथवा इस्लाम को न मानने वाले **काफिरों** द्वारा इसे स्पर्श करने से पाक **कलमे** के नापाक हो जाने का भय था।

ii) उसने अपने पूर्ववर्ती शासकों के समय से मनाया जाने वाला **नौरोज** (पारसी धर्म के वर्ष का पहला दिन) के पर्व का आयोजन समाप्त कर दिया।

iii) पुरानी मस्जिदों, आदि की मरम्मत के आदेश दिए गए और **इमामों** और **मुअज्जिनों** आदि की नियमित वेतन पर बहाली हुई।

iv) मौहम्मद साहब द्वारा प्रतिपादित नियमों को लागू कराने और उनके द्वारा निषेध प्रथाओं को रोकने के लिए **मुहतसिब** (नैतिक आचरण की देख-रेख करने वाले) की नियुक्ति की गई। शराब पीना, भांग खाना, जुआ खेलना और वेश्यावृत्ति की इस्लाम धर्म में मनाही है। अत: इन पर रोक लगाई गई। सम्राटों को उनके दो जन्म दिनों (चंद्र और सूर्य कैलेंडर के हिसाब से) पर सोने और चांदी से तौलने की प्रथा समाप्त कर दी गई।

v) सम्राटों को उनके दो जन्म दिनों (चन्द्र और सूर्य कैलेंडर के हिसाब से) पर सोने और चांदी से तोलने की प्रथा समाप्त कर दी गई।

vi) 1665 ई. में सम्राट ने गुजरात के गवर्नर को आदेश दिया कि होली और दीवाली अहमदाबाद और इसके **परगनों** के बाजारों से बाहर मनाई जाए। होली पर इस आंशिक रोक के पीछे यह तर्क दिया गया था कि हिंदू "गंदी-गंदी गालियां" देते हैं और **चकलों** और बाजारों में होली जलाते हैं, लोगों का सामान जबरदस्ती और चोरी से आग में फेंक देते हैं।

vii) उसके शासन के ग्यारहवें वर्ष में झरोखा दर्शन की प्रथा समाप्त की दी गई। सम्राट इसे इस्लाम के विरुद्ध मानता था क्योंकि दर्शनार्थियों का समूह उन्हें पृथ्वी पर भगवान का अवतार मानते थे इसलिए वे सम्राट का दर्शन किए बिना कुछ खाते नहीं थे।

viii) औरंगजेब ने दरबार में अपने सामने दरबारी संगीतकारों के गायन पर रोक लगा दी। "संगीत में उसका मन नहीं रमता था और उसके पास काम इतना अधिक था कि वह मनोरंजन का समय नहीं निकाल पाता था, धीरे-धीरे दरबार में संगीत का पूर्णत: निषेध हो गया।" परंतु संगीतकारों को अवकाश भत्ता दिया जाता था। इसके अलावा **नौबत** (शाही ढोल) को बरकरार रखा गया।

पहले पांच कार्यों से औरंगजेब की इस्लाम धर्म के प्रति आस्था के साथ-साथ सामाजिक सुधार की झलक भी मिलती है। इनमें से किसी को "हिंदू विरोधी" नहीं कहा जा सकता है। सातवें और आठवें के संबंध में भी यही बाद लागू होती है। केवल छठा कार्य सीधे हिंदुओं को प्रभावित करता है। जदुनाथ सरकार टिप्पणी करते हैं "यह निश्चित रूप से होली के मामले में पुलिस कानून और दीवाली के मामले में धर्मांधता थी।"

जदुनाथ सरकार के यह कथन विचारणीय हैं परंतु सरकार एक बात ध्यान में नहीं रखते हैं कि पूरे साम्राज्य में होली या दीवाली पर रोक नहीं लगाई गई थी। इसे औरंगजेब के अन्य आदेश के परिप्रेक्ष्य में रखकर देखना चाहिए " जब 1669 ई. में बुरहानपुर में प्रतिद्वंदी गुटों के बीच संघर्ष होने पर उसने मुहर्रम का जुलूस निकालने पर प्रतिबंध लगा दिया था।" यह प्रतिबंध भी एक "पुलिस कानून" था और दीवाली और होली की तरह यह किसी खास प्रांत तक सीमित नहीं बल्कि संपूर्ण मुगल राज्य में लागू किया गया था।

झरोखा दर्शन से संबंधित सातवें कार्य से हिंदू समुदाय का कोई सरोकार नहीं था। यह इस्लाम के सिद्धांतों के प्रति सम्राट के व्यक्तिगत दृष्टिकोण का परिणाम था।

आठवें आदेश में दरबार में संगीत पर रोक लगा दी गई थी, अब इसे भी हिंदुओं के खिलाफ एक कदम मानना गलत होगा। इस आदेश से खुशहाल खां और बिसराम खां जैसे दरबारी मुस्लिम संगीतकार भी प्रभावित हुए। इसके बावजूद कुलीनों ने संगीत सुनना बंद नहीं कर दिया।

अब हम उन प्रधान अध्यादेशों पर विचार करेंगे जो "राज्य" नीति के रूप में पूरे साम्राज्य में हिंदुओं को सीधे प्रभावित करती थी। इसमें से सबसे पहला कदम था नये बने हिंदू मंदिरों का विध्वंस। आपको याद होगा कि शाहजहां ने भी नये बने (**ताजा सनमखाना**) मंदिरों को ही तोड़ा था। परंतु उसका यह कार्य

बनारस तक ही सीमित रहा था। दूसरी तरफ औरंगजेब का आदेश पूरे साम्राज्य (खासकर उत्तर भारत) पर लागू होता था। उसने पुराने मंदिरों की मरम्मत न करने का आदेश दिया था।

1670 ई. में एक **फरमान** जारी किया गया कि "उड़ीसा में पिछले 10-12 वर्षों के भीतर ईंट या मिट्टी के बने सभी मंदिरों को अविलंब तोड़ दिया जाए।" औरंगजेब के शासनकाल में नष्ट किए गए मंदिरों में बनारस का विश्वनाथ मंदिर, मथुरा का केशव राय मंदिर और सोमनाथ का पुनर्निर्मित मंदिर उल्लेखनीय है। 1664 ई. में औरंगजेब जब गुजरात का वायसराय था तब उसने अहमदाबाद स्थित चिंतामन के मंदिर में गौ हत्या कर उसे अपवित्र कर दिया था और तत्पश्चात उसे मस्जिद में बदल दिया था। अन्य मंदिरों में भी जानबुझकर गौ हत्या की जाती थी।

मथुरा के मंदिरों का मामला बड़ा रोचक है। इस मंदिर का निर्माण बीर सिंह बुंदेला ने तैंतीस लाख रुपए खर्च करके किया था। 1602 ई. में अबुल फजल की हत्या कर वह जहांगीर का विश्वासपात्र बन गया था अत: उसके मंदिर को स्पर्श नहीं किया गया पर औरंगजेब ने इसे विशाल मस्जिद में बदल दिया और मथुरा का नाम बदलकर इस्लामाबाद कर दिया।

अकबर ने जिस **जजिया** कर को काफी पहले समाप्त कर दिया था उसे औरंगजेब ने पुन: 1679 ई. में लागू कर दिया। औरंगजेब के इस कार्य ने कई आधुनिक विद्वानों को विचलित किया है। जदुनाथ सरकार जैसे इतिहासकार ने इसे मंदिर तोड़ने की भाँति ही धर्मांधता से परिपूर्ण कार्य बताया है। पर सतीश चन्द्र का मानना है कि इसका संबंध दक्खन समस्या (गोलकुंडा, बीजापुर और मराठा) से है, वे यह भी बताते हैं कि सम्राट गहरे राजनैतिक संकट में फंसा हुआ था और वह मुसलमानों, खासकर कट्टरपंथियों का सहयोग प्राप्त करने के लिए कुछ चमत्कारिक कदम उठाना चाहता था। (**इकॉनॉमिक एंड सोशल हिस्ट्री ऑफ द ओरिएंट**, भाग XII, अंक III, नामक पत्रिका में 'जजिया एंड द स्टेट इन इंडिया ड्यूरिंग द 17 सेंचुरी' नामक लेख से उद्धृत) **जजिया** से वित्तीय संकट कम करने के बारे में भी सोचा गया था पर यह तर्क बहुत कमजोर है क्योंकि **जजिया** से प्राप्त आय इतनी नगण्य थी कि उससे राज्य का वित्तीय संकट हल नहीं किया जा सकता था।

1665 ई. में आदेश जारी किया गया कि हिंदू व्यापारियों को उनके माल पर 5 प्रतिशत सीमा शुल्क देना पड़ेगा जबकि मुसलमानों को मात्र $2^1/_2$ प्रतिशत शुल्क देना पड़ता था। 1671 ई. में जारी दूसरे **फरमान** के अनुसार **खालिसा** भूमि का राजस्व संग्राहक केवल मुसलमान हो सकता था। बाद में उसने अनिच्छापूर्वक हिंदुओं को केवल कुछ विभागों में जगह दी, फिर भी उनकी संख्या मुसलमानों की अपेक्षा आधी से कम रही।

औरंगजेब के व्यक्तित्व में एक विरोधाभास दिखाई पड़ता है। अपने असहिष्णुता के कार्यों के विपरीत उसने राज्य नौकरशाही में बड़ी संख्या में गैर-मुस्लिम अधिकारियों को नियुक्त किया था। औरंगजेब ने **मनसब** व्यवस्था में भी हिन्दुओं का प्रतिशत कम नहीं किया, बल्कि अपने पूर्वजों की तुलना में यह कुछ ज्यादा ही था। कई हिंदुओं को बड़े पद मिले और दो को गर्वनर नियुक्त किया गया। यह भी रोचक तथ्य है कि एक तरफ तो सम्राट बड़े पैमाने पर मंदिर तुड़वाने का आदेश देता है वहीं दूसरी तरफ मंदिरों और पुजारियों के भरण-पोषण के लिए अनुदान भी जारी करता है।

औरंगजेब के इन कार्यों के '**मनोवैज्ञानिक विश्लेषण**' से साफ जाहिर है कि औरंगजेब ग्लानि का अनुभव कर रहा था। उसने अपने भाइयों की हत्या की थी और बूढ़े पिता को कैदखाने में डाल दिया था — बाबर से लेकर शाहजहां तक के मुगल इतिहास में कभी भी ऐसा नहीं हुआ था। उसके अंतिम कार्य से तो **तुरा-ए चगताई** की भी अवमानना हुई थी क्योंकि अपने पिता के जिंदा रहते ही वह सिंहासन पर बैठ गया था। कभी न कभी ऐसे व्यक्ति को कुंठा, पीड़ा और पश्चाताप से गुजरना पड़ता है। अत: उसने इस्लाम का कवच ओढ़ लिया। इस दृष्टि से उसके सभी कार्य उसके व्यक्तिगत निर्णय के परिणाम थे।

बोध प्रश्न 3

1) गैर-मुस्लिम जनता के प्रति जहांगीर के दृष्टिकोण पर विचार-विमर्श कीजिए।

....

....

....

....

....

2) निम्नलिखित को परिभाषित कीजिए :

सिजदा

....

....

जमीं बोस

....

....

ताजा सनमखाना

....

....

3) होली और दीवाली संबंधी औरंगजेब के आदेशों पर टिप्पणी कीजिए।

....

....

....

....

....

30.4 सारांश

इस इकाई में हमने प्रमुख धार्मिक समुदायों के प्रति मुगल शासकों की नीतियों पर विचार-विमर्श किया है। मुगल शासकों पर कोई संवैधानिक प्रतिबंध नहीं लगा हुआ था, इसलिए वे निरंकुश थे और किसी के प्रति वे उत्तरद्रायी भी नहीं थे। अत: उनके कार्य और नीतियां एक प्रकार से राज्य की ही नीतियां बन जाती थीं।

मुगल राज्य की अपनी कोई धार्मिक नीति नहीं थी। यह नीति मुगल सम्राट की सोच और व्यक्तिगत दृष्टिकोण पर निर्भर थी। अकबर और जंहागीर काफी हद तक सहिष्णु थे। शाहजहां अपने पूर्वजों के बनाए रास्ते से कई मामलों में अलग हट कर चला। पर औरंगजेब के शासनकाल में धार्मिक और हिंदू विरोधी कदम स्पष्ट रूप से उठाए गए। इन सबसे पीछे औरंगजेब की व्यक्तिगत सोच और अंदर छिपी कुंठा और गलानि काम कर रही थी।

30.5 शब्दावली

इबादत खाना : मूलत: अकबर ने 1575 ई. में **इबादत खाना** की स्थापना की। यह मुस्लिम (सुन्नी) धर्मशास्त्रियों के साथ धार्मिक बहस करने के उद्देश्य से की थी। बाद में इसके दरवाजे सभी धर्मावलंबियों के लिए खोल दिए गए।

इमाम-ए आदिल : सही शासक

मुअज्जिन : वह व्यक्ति जो मस्जिद में नमाज पढ़ने के लिए **अजान** देता है।

मुजाहिद : धर्म के लिये युद्ध करने वाला

मुजतहिद : अपरिहार्य सत्ता

30.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) देखिए उपभाग 30.2.1, 30.2.2 । स्पष्ट कीजिए कि अभिव्यक्ति की इस शैली के कारण आधुनिक इतिहासकार उलझन में पड़ गए और जिन्होंने उनके ग्रंथों के अर्थों को ठीक ढंग से विश्लेषित करने की कोशिश नहीं की। अत: वे सही निष्कर्ष पर नहीं पहुंच पाए। किसी भी युद्ध को **जेहाद** और दुश्मन को **कुफ्र** आदि की संज्ञा देना आम बात थी। इसी तथ्य पर विस्तार से चर्चा कीजिए।

2) देखिए उपभाग 30.2.3 । विश्लेषण करके यह बताइए कि किस प्रकार इलियट और डॉउसन ने मुगल इतिहास के दस्तावेजों के उन्हीं अंशों का अनुवाद किया है जिससे मुगल शासक वर्ग को शोषक और धर्मांध के रूप में दिखाया जा सके या फिर मुसलमानों (मुगल शासकों) को हिंदुओं (जनता) पर अत्याचार करते हुए दिखाया जा सके।

बोध प्रश्न 2

1) देखिए उपभाग 30.3.1 । इस तथ्य पर विचार कीजिए कि 1556-1568 के बीच विभिन्न समुदायों को धार्मिक रियायत दिए जाने के पीछे राजनैतिक उद्देश्य काम कर रहा था। तुरानी कुलीनों की बगावत का सामना करने के लिए अकबर को भारतीय मुसलमानों और राजपूतों पर निर्भर रहना पड़ता था। पर जब भी उसे जरूरत महसूस हुई उसने उनके खिलाफ कड़े कदम उठाने में जरा भी संकोच नहीं किया और राजनैतिक जरूरत के अनुसार इसे धार्मिक स्वर भी प्रदान किया (बिल्कुल वैसा ही जैसा 1568 ई. में किया था)।

2) देखिए उपभाग 30.3.1 । इबादत खाने में होने वाली बहस से उसके चिंतन में आमूल परिवर्तन हो गया और वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि सभी धर्मों में एक तत्व की समानता है और इसके पीछे एक तर्क भी है।

बोध प्रश्न 3

1) देखिए उपभाग 30.3.2 । बताइए कि आमतौर पर उस पर यह आरोप लगाया जाता है कि वह इन समुदायों के विरुद्ध था पर ऐसी बात नहीं है।

2) देखिए उपभाग 30.3.3 ।

3) देखिए उपभाग 30.3.4 । बताइए कि कुछ कारणों से उसने केवल गुजरात क्षेत्र के लिए ऐसे कदम उठाए (विस्तार से चर्चा कीजिए)। उसने ऐसा ही कदम **मुहर्रम** के संदर्भ में भी उठाया था। अत: यह सब धार्मिक से अधिक राजनैतिक मामलों से संबद्ध था।

इस खंड के लिए कुछ उपयोगी पुस्तकें

इरफान हबीब (संपादक) : **मध्यकालीन भारत,** भाग 1 व 2

के. एम. अशरफ : **हिन्दुस्तान के निवासियों का जीवन और परिस्थितियाँ**

एस. आर. शर्मा : **मुगल सम्राटों की धार्मिक नीतियाँ**

रामनाथ : **मध्यकालीन भारतीय कलाएं एवं उनका विकास**

जी. डी. शर्मा : **मध्यकालीन भारतीय सामाजिक-आर्थिक व राजनीतिक संस्थाएं**

इन्दू बन्गा : **द सिटी इन इन्डियन हिस्ट्री**

एस. ए. ए. रिजवां : **द वन्डर दैट वाज इन्डिया,** भाग II

शिरीन मूसवी : **इकोनॉमी ऑफ द मुगल अम्पायर**